ग्रामीण क्षेत्र में प्रवसन और उसके प्रभाव

(मिर्जापुर जिले के छानबे ब्लाक के देवरी ग्राम के विशेष संदर्भ में)

मानव विज्ञान में एम.फिल. उपाधि हेतु

सत्र: 2013-14

लघु-शोध प्रबंध

ज्ञान शांति मैत्री

शोध निर्देशक
डॉ. वीरेन्द्र प्रताप यादव
सहायक प्रोफ़ेसर
मानव विज्ञान विभाग

शोधार्थी
सौरभ कुमार सिंह
एम.फिल मानवविज्ञान

मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ

महात्मा गाँधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय वर्धा (महाराष्ट्र)- 442005

(संसद द्वारा पारित अधिनियम 1997 क्रमांक 3 के अन्तर्गत स्थापित केंद्रीय विश्वविद्यालय)

अनुक्रमणिका

पृष्ठ संख्या

अध्याय-1 1-17

1.1 प्रस्तावना

1.2 प्रवसन के प्रकार

1.3 प्रवसन के कारण

1.4 अध्ययन के उद्देश्य

1.5 अध्ययन का महत्व

1.6 अध्ययन में आयी कठिनाइयाँ व समस्याएं

1.7 प्रवसन के सिद्धांत

अध्याय-2 **18-23**

अध्ययन की शोध प्रविधियां

अध्ययन में आयी कठिनाइयाँ व समस्याएं

अध्याय-3 **24-61**

क्षेत्र परिचय एवं स्थानीय लोग

3.1 मानचित्र (भारत, उत्तर-प्रदेश, मिर्जापुर)

3.2 देवरी ग्राम का मानचित्र

3.3 उत्तर-प्रदेश का संक्षिप्त परिचय

3.4 मिर्जापुर का संक्षिप्त परिचय

3.5 देवरी ग्राम एवं क्षेत्र के लोगों का संक्षिप्त परिचय

अध्याय-4

शोध क्षेत्र में प्रवसन का विश्लेषण **62-78**

4.1 तथ्य विश्लेषण

4.2 सारणीयन

अध्याय-5 **79-83**

प्रवसन का परिणाम, परिवर्तन एवं व्यापक प्रभाव

देवरी ग्राम के अर्थव्यवस्था पर प्रवसन का प्रभाव

अध्याय-6 **84-87**

निष्कर्ष

- **संदर्भ ग्रंथ सूची** **88-90**
- **परिशिष्ट**
- **प्रवसन से संबन्धित प्रतिरूप (MODEL) एवं चार्ट**

अध्याय-1

1.1 प्रस्तावना

प्रवसन एक सामाजिक प्रक्रिया है। जो उतनी ही प्राचीन है जितनी मानव सभ्यता। मानव समाज का विकास और विश्व के विभिन्न भागों में सभ्यताओं के विकसित होने में व्यक्तिओं के एक स्थान से दुसरे स्थान में गमन का काफी योगदान है। शिकार करने तथा समूहों में एकत्र रहने वाले पूर्वज भोजन की तलाश में एक स्थान से दुसरे स्थान पर जाते थे। खानावदोसी चारा गाही धारणा के दौरान पशु-झुण्ड और इंसानों के काफिलों पालतू पशुओं मुख्य रूप से मवेशी के लिए चारागाहों के तलाश में एक स्थान से दुसरे स्थान पर जाते रहते थे । यह विशेषता भारत सहित एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका में चारागाही समुदायों में अब भी पाई जाती है। वास्तव में इस अभिव्यक्ति "हरे चारागाहों की तलाश में" की उत्पत्ति प्रवास की इसी विशेषता से हुई। प्रवसन एक व्यक्तिगत परिघटना भी है। संभवत: आप किसी गाँव से शहर में, किसी एक शहर से दुसरे में अथवा एक से दुसरे देश में स्थानांतरित हुए होगें । आपका परिवार संभवत: गाँव से शहर में आ गया होगा। संचार परिवहन व सूचना चैनलों के आधुनिक साधनों के विकसित हो जाने से लोग पहले की अपेक्षा कही अधिक निश्चिंत हो गए है।

1.2 समाजशास्त्रीय परिभाषा:– प्रवसन शव्द का अर्थ है भौगोलिक क्षेत्र में मानव का संचालन। यह एक स्थान से दुसरे स्थान को व्यक्तिगत

रूप से आवास समुह में लोगों के संचालन की ओर भी संकेत करता है। प्रवसन का इसके अनुसार अर्थ हुआ आवास का परिवर्तन । प्रवसन की दूरी, दिशा एवं अवधि महत्वपूर्ण नहीं होती, फिर भी इन तीनों में से कोई भी कारक किसी देश में प्रवास की प्रवृत्ति को परिभाषित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। समाजशास्त्रियों के अनुसार "प्रवसन जनसंख्या संयोजनों में बहुआयामी परिवर्तनों में परिणत होता है ।

1.3 प्रवसन के प्रकार:-

1. चक्रीय प्रवसन:– किसी मौसम विशेष में जो प्रवसन दृष्टिगत होता है उसे चक्रीय प्रवसन कहा जाता है ।

2. आतंरिक व अंतरराष्ट्रीय प्रवसन:- जब लोग अपनी जन्म/ निवास/ अधिवास के भीतर ही प्रवास करते है तो इसे आतंरिक प्रवसन कहा जाता है। दूसरी तरफ जब लोग एक देश से दुसरे देश में आवागमन करते है तो इसे अंतरराष्ट्रीय प्रवसन कहा जाता है ।

3. बलात प्रवसन:– जब जन समूह किसी दबाव के कारण जैसे महामारी, युध्द और तानाशाही आदि से उग्र होकर अपने गृह प्रदेश को छोड़ने का फैसला करते है तो इसे बलात प्रवसन कहा जाता है ।

4.शरणार्थी प्रवसन:- वर्तमान जगत में भी उत्पीड़न आदि से बचने के लिए अपने घरों को छोड़ एक देश से दुसरे देश में पलायन करते हुए देखे जाते है । ये प्रायः पड़ोस के देशों में शरण लेते है ।

5. ऋतुनिष्ठ एवं आवधिक प्रवसन:– किसी मौसम विशेष में देखे जाने वाले प्रवसन को ऋतुनिष्ठ प्रवसन का नाम दिया जाता है जैसे - फसल की कटाई करने वाले मजदूर ।

1.4 प्रवसन के कारण:–

1. सामाजिक कारण:– सामाजिक भेदभाव के परिणाम स्वरूप प्रवसन देखने को मिलता है ।

2. धार्मिक कारण:– सामान जाति एवं धर्म के लोग एक स्थान पर रहना ज्यादा पसंद करते है जिसके फलस्वरूप प्रवसन बड़े स्तर पर देखने को मिलाता है ।

3. आर्थिक कारण:– रोजगार के कारण प्रवसन बड़े पैमाने पर होता है।

4. जननांकिकीय कारण:– अधिक जनघनत्व वाले क्षेत्र को छोड़कर लोग कम जनघनत्व की तरफ बढ़ते है।जिससे प्रवसन व्यापक स्तर पर दिखाईदेता है।

प्रवसन का नवशास्त्रीय सिद्धांत:-

नवशास्त्रीय सिद्धांत प्रवसन को विभिन्न श्रम बाजारों में प्राप्त होने वाले आमदनी के अंतर द्वारा संचालित मानता है । इसका सबसे आधारभूत माडल मूल रूप से प्रवसन को आर्थिक विकास की एक प्रक्रिया के तौर पर व्याख्यायित करने के लिए हिक्स (1932), लेविस (1954) और हैरिस एवं टोडारो (1970) द्वारा विकसित किया गया

था । इनके कार्यों में यह प्रदर्शित किया गया था कि विभिन्न बाजारों या देशों में वास्तविक मजदूरी में अंतर के कारण प्रवसन होता है । मजदूरी में यह अंतर श्रम बाजारों के विभिन्न प्रकार के कठोर नियंत्रणों के कारण आता है । इस सिद्धांत के अनुसार, प्रवसन श्रम आपूर्ति एवं मांग में भौगोलिक अंतर से नियंत्रित होता है । यह भौगोलिक अंतर श्रम-समृद्ध और पूंजी-समृद्ध देशों के बीच पारिश्रमिक दर में अंतर को जन्म देता है । इस प्रकार नवशास्त्रीय दृष्टिकोण पारिश्रमिक दर पर केंद्रित है । पूर्ण रोजगार की मान्यता के अधीन यह प्रवसन प्रवाह और पारिश्रमिक दर में अंतर के बीच के रेखीय संबंध को व्यक्त करता है (ब्युअर और जिमरमैन 1999; मैसी आदि 1993; बोर्जस 2008) ।
पारिश्रमिक दर में 30% से अधिक के अंतर को प्रवसन से प्राप्त होने वाले लाभ एवं लागत की दृष्टि से आवश्यक माना गया (मंसूर और क्विलिन 2006; क्रिगर और मैत्रे 2006) । विस्तारित नवशास्त्रीय माडलों में, वास्तविक आय की बजाय संभावित आय को प्रवसन का निर्धारक माना गया और मुख्य चर के रूप में रोजगार की संभावना भारित आय को माना जाने लगा (ब्युअर और जिमरमैन 1999; मैसी आदि 1993) ।

अन्य समायोजनों के बाद भी इस माडल के परीक्षण में यह पाया गया कि मजदूरी-प्रवसन के बीच रैखिक संबंध नहीं है, बल्कि मजदूरी अंतर की श्रेणी और राष्ट्रीय आय का स्तर भी महत्वपूर्ण है । इसी प्रकार प्रवासित होने की योग्यता प्रवसन लागत पर निर्भर है । इस कारण सबसे गरीब व्यक्ति प्रवासित नहीं हो पता है और न ही सबसे गरीब

देश सर्वाधिक श्रमिकों को प्रवासित करा पाता है (फेस्ट 2000; डस्टमैन आदि 2003; डी हास 2008; मैसी आदि 1998)

अवलोकित प्रवसन प्रतिमान कूबड़ के आकार पाया जाता है: देश की संवृद्धि बढ़ने के साथ प्रवसन दर बढ़ने लगती है, क्योंकि अधिक लोग या परिवार प्रवसन खर्चे को पूरा करने की स्थिति में आने लगते हैं. बाद में देश के और विकसित होने पर प्रवासित होने मिलने वाले तुलनात्मक लाभों में कमी आने से प्रवसन दर गिरने लगती है । इन्ही आधारों पर नव शास्त्रीय सिद्धांत की आलोचना की जाती है ।

नवशास्त्रीय बृहद स्तरीय व्याख्या को व्यक्तिगत विकल्प के सूक्ष्म स्तरीय मॉडल में स्थानांतरित किया जा सकता है और इसे प्रवसन का मानव पूंजी सिद्धांत *Human capital theory of migration* का नाम दिया गया (टोडारो 1969)। जदस्टड (1962) द्वारा प्रस्तुत किए गए मानव पूंजी सिद्धांत ने नवशास्त्रीय सिद्धांत को और अधिक समृद्ध किया।

इसमें प्रवसन के संदर्भ में सूक्ष्म स्तर पर व्यक्ति की सामाजिक-जनांकिकीय विशेषता को महत्वपूर्ण निर्धारक के रूप में माना गया (बावर और जिमरमैन 1999)। इस प्रकार के विश्लेषण के केंद्र में एक तार्किक व्यक्ति है, जो अपनी सुविधाओं और लाभ को अधिकतम करने के लक्ष्य के साथ प्रवसन करता है। मानव पूंजी के गुणों, कौशल, आयु, वैवाहिक स्थिति, लिंग, पेशा और श्रम बाजार की स्थिति के साथ-साथ व्यक्तिगत वरीयताएं और आकांक्षाएं प्रभावशाली रूप से निर्णय करती हैं कि कौन प्रवासित होगा और कौन नहीं होगा.

व्यक्तियों के बीच असमानता एक महत्वपूर्ण कारक है । एक ही प्रेषक देश के विभिन्न व्यक्तियों में प्रवासित होने की अलग-अलग क्षमता पाई जाती है और उनके द्वारा व्यक्तिगत क्षमतानुसार गंतव्य क्षेत्रों/देशों का चयन किया जाता है (बोनिन आदि 2008) ।

यह भी देखा गया कि उम्र बढ़ने के साथ प्रवसन की संभावना घटने लगती है और शिक्षा के स्तर में बढ़ोत्तरी से प्रवसन दर बढ़ती है (ब्यूअर और जिमरमैन 1999) । मानव पूंजी सिद्धांत के अनुसार प्रवासी तुलनात्मक रूप से अधिक कौशलयुक्त होते हैं, और इसी कारण इनके सफल होने की संभावना बढ़ जाती है ।

बोर्ज्स (1987) ने आप्रवासियों के संबंध में अमेरिकी श्रम बाजार में इस मान्यता का परीक्षण किया और प्रवासियों के कौशल और आय वितरण के संबंधों का विश्लेषण किया । उन्होंने यह पाया कि उच्च आय असमानता वाले देशों से प्रवासित व्यक्ति प्रेषक एवं प्राप्तकर्ता दोनों देशों के लोगों की औसतन तुलना में कम कौशलयुक्त होते हैं । उन्होंने यह तर्क प्रस्तुत किया कि विभिन्न देशों से उत्प्रवासित लोगों के समान कौशल के बाद भी आय में अंतर पाया जाता है और यह अंतर प्रवासित होने के समय मूल प्रेषक देशों की राजनैतिक और आर्थिक दशाओं में भिन्नता के कारण होता है ।

नवशास्त्रीय सिद्धांत से ही जुड़ा विकर्षण-आकर्षण रूपरेखा है, जिसमें श्रमिकों के प्रवाह के आर्थिक संदर्भ को महत्व दिया जाता है (ब्यूअर और जिमरमैन 1999) । विकर्षण-आकर्षण कारक प्रवसन के संदर्भ में तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य और द्वैत संरचना उपलब्ध कराते हैं । विकर्षण

और आकर्षण कारक अधिकांशतः एक दूसरे के दर्पण प्रतिरूप होते हैं । इस रूपरेखा की प्रवसन के प्रभावशाली कारकों को निर्धारित कर सकने की अक्षमता के आधार पर आलोचना की जाती है (डी हास 2008) । नवशास्त्रीय सिद्धांत की इस आधार पर आलोचना की जाती है कि यह यांत्रिक तौर पर प्रवसन से जुड़े निर्धारकों की पहचान करता है । इसमें बाजार अक्षमताओं को नजरअंदाज करने, प्रवासियों एवं प्रवासी समुदायों को समांग मानने की प्रवृत्ति भी पाई जाती है। यह स्वदेश और मेजबान देशों के नीतिगत प्रभावों को भी अनदेखा करता है । इसे इस सिद्धांत में अतिरिक्त प्रवसन व्यय के रूप में देखा जाता है।

मानव पूंजी सिद्धांत की अत्यधिक सकारात्मक होने के आधार पर आलोचना की जाती है । प्रवसन हमेशा अधिकतम लाभ के लिए की जाने वाली स्वैच्छिक क्रिया मात्र नहीं होती है ।

प्रवसन शोध के बारे में किए गए पुनरावलोकन में मैसी आदि (1998) ने यह पाया कि प्रवसन प्रवाहों और मजदूरी में अंतर के बीच सकारात्मक संबंध होता है, जो निरंतर बना भी रह सकता है, लेकिन इसका यह अभिप्राय नहीं है कि यह प्रवसन स्तर को निर्धारित करने का सर्वाधिक प्रभावी कारक है ।

नवशास्त्रीय आर्थिक व्याख्याओं और विकर्षण-आकर्षण रूपरेखा से व्यापक असंतुष्टि नए सैद्धांतिक परिदृश्यों को उभरने में सहायक हुई, जिसमें व्यक्तियों, प्रेरणाओं और संदर्भों की अंतर्क्रिया को विश्लेषण का आधार बनाया गया (मैसी आदि 1998) ।

प्रवसन का नव-आर्थिकी सिद्धांत New economics theory of migration-

प्रवसन के नव-आर्थिक सिद्धांत ने नव शास्त्रीय सिद्धांत की कुछ मान्यताओं को चुनौती दिया। इसके अंतर्गत प्रवसन निर्धारकों की नवीन प्रकृति एवं विश्लेषण का अलग स्तर प्रस्तुत किया गया । इसके अंतर्गत शोध का केंद्रबिंदु व्यक्तिगत स्वतंत्रता से हटकर पारस्परिक निर्भरता हो गया (स्टार्क 1991) । इसके यह मुख्य तर्क प्रस्तुत किया गया कि प्रवसन निर्णय पृथक व्यक्तिगत कर्ताओं द्वारा न लेकर परिवारों या घरेलू समूहों द्वारा लिए जाते हैं। इसके आगे प्रवासियों के निर्णय कारकों के एक समग्र समूह से प्रभावित होते हैं, जिन्हें मूल देश की परिस्थितियां आकारबद्ध करती हैं । इस प्रकार, प्रवसन निर्णय शुद्ध रूप से मात्र व्यक्तिगत अधिकतम-उपयोगिता की गणना पर ही आधारित नहीं होते हैं, बल्कि आय संबंधी जोखिमों और विभिन्न प्रकार के बाजार - श्रम बाजार, ऋण बाजार और बीमा बाजार की असफलताओं का घरेलू स्तर पर प्रत्युत्तर भी होते हैं (मैसी आदि 1993) ।

अतः प्रवसन अर्थपूर्ण पारिश्रमिक अंतर की अनुपस्थिति या उपस्थिति मात्र अतार्किकता की ओर ही इंगित नहीं करती बल्कि यह प्रेरित करती है कि तुलनात्मक वंचना (relative deprivation) से जुड़े अन्य चरों के समूह पर भी विचार किया जाए, जिनके कारण एक घरेलू समूह जो दूसरों की तुलना में खराब स्थिति में है, परिवार के सदस्यों को आसानी से विदेश भेजने के लिए तैयार हो जाता है औरघरेलू

आमदनी से जुड़े खतरे को टालते हुए न्यूनतम जोखिम की स्थिति सुनिश्चित की जा सके (स्टार्क 1991; स्टार्क 2003) ।

इन अवधारणाओं को प्रस्तुत करते हुए, स्टार्क के सामने विकासशील देशों, जहाँ संस्थागत कार्य प्रणाली जैसे सरकारी कार्यक्रम या निजी बीमा बाजार की उपस्थिति लगभग नगण्य हैं, में गरीब घरों में आमदनी से जुड़े खतरों को टालने या न्यूनतम करने की मनःस्थिति प्रवसन को एक सार्थक और प्रभावी रणनीति उपलब्ध कराता है । प्रवसन के नवीन आर्थिकी सिद्धांत आधारित शोधों में उत्प्रवाह (remittances) एक महत्वपूर्ण और समन्वित भूमिका निभाते हैं, क्योंकि वे घरेलू समूहों की आपसी संबद्धता और जोखिम को कम करने की अवधारणाओं का समर्थन करते हैं और साथ ही प्रवसन के कारणों एवं प्रभावों संबंधी अनुभवपरक अध्ययनों से विश्लेषणात्मक स्तर पर जुड़ जाते हैं (टेलर 1999) ।

प्रवसन के निर्धारकों और प्रभावों को समानांतर रूप से विश्लेषित करने में सक्षम होने के बाद भी NEM की आलोचना की जाती है । यह सिद्धांत प्रेषणकर्ता के प्रति झुकाव रखती है और बाजार की अपरिपक्वता एवं आय/ रोजगार से जुड़े अन्य चरों को पृथक कर पाने में होने वाली कठिनाइयों के कारण इसे सीमित रूप से उपयोगी पाया गया । कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि इस सिद्धांत को अनुभवात्मक परीक्षण और पर्याप्त समर्थन नहीं मिला । आधारभूत तौर पर यह सामाजिक चयन एक लेखाजोखा है और इसमें घरेलू

समूहों की आंतरिक गतिशीलता को नजरंदाज करने के साथ ही अधिक भविष्योन्मुखी होने की प्रवृत्ति है (फेस्ट 2000) ।

विश्व व्यवस्था सिद्धांत World systems theory

ऐतिहासिक-संरचनात्मक दृष्टिकोण प्रवसन प्रक्रियाओं को समझने के लिए अलग प्रकार की अवधारणाओं को प्रस्तुत करता है । वैलरस्टाइन (1974) के विश्व व्यवस्था सिद्धांत पर आधारित यह सिद्धांत प्रवसन के निर्धारकों को विश्व बाजार के संरचनात्मक परिवर्तनों से जोड़ता है और प्रवसन को विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं की एक दूसरे पर बढ़ती निर्भरता और उत्पादन के नए स्वरूपों का उभार यानि वैश्वीकरण की परिघटना के एक प्रकार्य के रूप में देखता है (मैसी आदि 1993; सासेन 1988; स्केल्डॉन 1997; सिल्वर 2003) ।

निर्यातोन्मुखी विनिर्माण का प्रसार और कृषिगत वस्तुओं का निर्यात विकसित अर्थव्यवस्थाओं से अर्ध-विकसित या विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की ओर होने वाले प्रत्यक्ष विदेशी पूंजी निवेश प्रवाह के साथ मजबूती के साथ जुड़ गया है, जिसके कारण पारंपरिक कार्यप्रणाली और उसकी संरचनाओं का क्षरण हुआ और इसने नए जनसंख्या समूहों को क्षेत्रीय या लंबी दूरी के प्रवासनों के लिए गतिमान कर दिया । इस प्रकार विश्व व्यवस्था सिद्धांतकारों के लिए पूंजीगत गतिशीलता एक महत्वपूर्ण कारक है । यह सिद्धांत पूंजी और श्रमिक गतिशीलता को एक ही सिक्के के दो पहलू के रूप में देखता है एवं इसे आपस में जुड़ा हुआ मानता है ।

प्रवसन पूंजीवादी विकास से उत्पन्न अव्यवस्था और विसंगतियों का अवश्यंभावी परिणाम है और इसे ऐतिहासिक रूप से देखा जा सकता है । यह सिद्धांत वैश्विक राजनीति और आर्थिक असमानता को भी स्वीकार करता है । ऐतिहासिक-संरचनात्मक उपागम इस तथ्य को अस्वीकार करता है कि वास्तव में लोगों के पास प्रवसन निर्णय के लिए वास्तविक रूप में चयन की स्वतंत्रता होती है और लोग व्यापक संरचनात्मक प्रक्रियाओं पर प्रतिक्रियात्मक स्वरूप दबाव बनाते हुए प्रवासित हो जाएं (डी हास 2008) ।

अंतरराष्ट्रीय प्रवसन पर हाल के वर्षों में किए गए अध्ययनों में विश्व व्यवस्था और वैश्विक विकास के परिप्रेक्ष्यों में अब कमी आने लगी है । संभवतः इसका कारण यह है कि इस सिद्धांत के अंतर्गत अनुभवात्मक परीक्षण के लिए परिकल्पनाओं के एक समूह को अलग नहीं किया जा सकता है । इसके अतिरिक्त यह सैद्धांतिक रुपरेखा के स्तर पर प्रभावी रूप से वर्णनात्मक है और इसे अनुभवजन्य तथ्यों के प्रत्याशित सूत्रीकरण (ex ante formulation) के रूप में ही स्वीकार किया जा सकता है (फावेल 2008a; बीजाक 2006) ।

द्वैत श्रम बाजार सिद्धांत Dual labor market theory

द्वैत श्रम बाजार सिद्धांत, विश्व व्यवस्था सिद्धांत की ही भांति प्रवसन को अर्थव्यवस्था के संरचनात्मक परिवर्तनों से जोड़कर देखता है, लेकिन प्रवसन की गतिशीलता की व्याख्या मांग के पक्ष में रखकर करता है (मैसी आदि, 1993) । पियरे (1979) द्वारा विकसित द्वैत श्रम बाजार सिद्धांत की यह मान्यता है कि विकसित अर्थव्यवस्थाओं

में द्वि-स्तरीय व्यवसायिक संरचना (bifurcated occupational structure) और आर्थिक संगठन का दोहरा प्रतिमान पाया जाता है । यह द्वैतता अर्थव्यवस्था में दो प्रकार के संगठनों को उत्पन्न करता है- पूंजी केन्द्रित, जहां कुशल एवं अकुशल श्रमिकों को उपयोग में लाया जाता है और श्रम-केन्द्रित, जहां केवल अकुशल श्रमिकों की आवश्यकता होती है ।

यह सिद्धांत यह तर्क प्रस्तुत करता है कि प्रवसन का संचालन श्रम के मांग की दशाओं से होता है न कि पूर्ति से । विकसित देशों की अर्थव्यवस्थाओं की विशेषता अर्ध-कुशल श्रम की मांग उत्पन्न करते है, जिसे घरेलू पेशेवरों द्वारा हीन स्थिति (low status) का मानते हुए ठुकरा दिया जाता है । इसी कारण इन नौकरियों को पूरा करने के लिए अन्य देशों से प्रवसन आवश्यक हो जाता है और इन देशों में बाजार की आवश्यकताओं के अनुरूप नीतिगत विकल्प के तौर पर सक्रिय रूप से भर्ती के प्रयास किए जाते हैं (उदाहरण के लिए यूरोप द्वारा साठ के दशक में प्रबंधित श्रमिक उत्प्रवासन) ।

यह सिद्धांत प्रेषणकर्ता देशों को दृष्टि में नहीं रखता और औपचारिक भर्ती प्रयासों को कुछ ज्यादा ही महत्व देता है । साथ ही समान आर्थिक संरचना वाले देशों के बीच प्रवसन दरों में अंतर को भी स्पष्ट कर पाने में यह सिद्धांत असफल रहा है । अनुभवात्मक अनुमान प्राथमिक और द्वितीयक क्षेत्रों के बीच आधारभूत अंतर पर निर्भर होने के कारण अधिकांशतः ऐच्छिक होता है और इसी कारण अस्थिर परिणामों को जन्म देता है। दूसरी तरफ, प्राप्तकर्ता देशों में विदेशी के

रूप में चिर स्थायी श्रमिक मांग और संरचनात्मक बेरोजगारी के सह-अस्तित्व का उचित व्याख्या प्रस्तुत करता है (एरेंगो 2000) ।

1.5 भारतीय ग्रामीण संरचना एवं प्रवसन:– ग्रामीण क्षेत्रो में गरीबी, सीमित रोजगार अवसर, कम एवं अनिश्चित अनियमित शिक्षाएवं स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव आदि सारी समस्याए संभवतः पाई जाती है जिसके कारण लोग शहरों की ओर आवागमन कर रहे है । जहां शहरी आद्योगिक विकास तेजी पर है उस क्षेत्र विशेष में गाँव से शहरों की ओर प्रवसन होता है।

1.6 प्रवसन का प्रभाव:– यह गृह ग्रामों के साथ-साथ गंतव्य के क्षेत्रों में भी जनसमुदाय संरचना में परिवर्तन ला देती है । प्रवसन एक सांस्कृतिक परिवर्तन ले आता है इसके प्रभाव से गंतव्य क्षेत्र आम तौर पर लाभान्वित होते है जब कि मूल क्षेत्र नुकसान में रहते है । प्रवसन के परिणामस्वरूप विचारधाराएँ बदलती है और भुमंडलीकरण की प्रक्रिया संस्कृतियो एवं नवीन परिवर्तनों के प्रसारण एवं संश्लेषण हेतु एक सशक्त माध्यम बन जाती है ।

1.7 अध्ययन का उद्देश्य:– किसी भी लघु शोध मे विषय के प्रति रुचि और उसकी वस्तुनिष्ठ प्रणाली और उसके उद्देश्यों पर निर्भर करती है । मेरे लघु शोध प्रबंध 'ग्रामीण समाज मे प्रवसन का प्रभाव' में जिन मुख्य वस्तुनिष्ठ विषय पर केन्द्रित रहा उनमें निम्नलिखित हैं।

प्रवसन के नियमों की समझ बनाना- अब तक प्रवसन को एक भौगोलिक शब्दावली के रूप में समझा जाता रहा है जिसके सिद्धांतों

का केंद्र आर्थिक कारक रहा है जिसने जीवन को अधिक सहबद्धता प्रदान की ली रेविंस्टन के प्रवासीय सिद्धांतों के साथ प्रवसन संक्रमण सिद्धान्त के प्रति शोध को जांचने का प्रयास किया गया है

प्रवसन का देवरी ग्राम में प्रभाव जानना- सामाजिक संक्रमण के दौर मे जहां प्रत्येक समाज संपर्क के बाद अपने सांस्कृतिक अवयवों मे परिवर्तन को महसूस करता हैं। और अपनेसांस्कृतिक मूल्यों मे भी परिवर्तन कर अनुकूलित रहने का प्रयास करता है । इसी क्रम मे ग्रामीण समाज पर प्रवसन का प्रभाव देखना अध्ययन का उद्देश्य है ।

ग्रामीण समाज की सांस्कृतिक-सामाजिक जीवन शैली को नजदीक से देखना-जिस समाज पर अध्ययन किया जा रहा हो उसके सांस्कृतिक - सामाजिक स्वरूप की समझ बनाये बिना उसके प्रति निष्कर्ष देना आसान नही होता । इसलिए शोध के उद्देशय मे छानबे ब्लाक के एक गावों मे उनकी सामाजिक-सांस्कृतिक स्थिति का ज्ञान होना आवश्यक माना गया जिसे मैने अपने मुख्य उद्देश्यो में शामिल किया है।

देवरी ग्राम के तात्कालिक देशकाल परिस्थितियों में सह अस्तित्व जानना-प्रवसन पारिस्थतिकी, सांस्कृतिक समरूपता के वैश्वीकरण दबावो के बीच ग्रामीण समाज का अपने नजदीकी समाजों से आपसी संबंध और निर्भरता के साथ जीवन के नए रूप को देखने का उद्देश्य भी मेरे शोध का हिस्सा रहा है।

भारतीय ग्रामों में प्रवसन तथा उसका प्रभाव ज्ञात करना

1.8 अध्ययन का महत्वः– आज़ादी के पश्चात भारतीय ग्रामों से एक बड़ी संख्या शहरो की ओर गयी उनके प्रवसन के कई कारण है। जिनमें रोजगार की तलाश, शिक्षा अच्छी जीवन शैली इत्यादि महत्वपूर्ण है। उपरोक्त कारणो के अलावा पश्चिमीकरण भी एक महत्त्वपूर्ण कारण है। जिसने प्रवसन को बढ़ावा दिया है। यदि भारतीय ग्रामों को गहराई से देखा जाए तो हम देखतें हैं कि वर्णव्यवस्था में ऊपर पायी जाने जातियाँ पश्चिमीकरण से खूब प्रभावित हुई। अच्छी जीवनशैली, रोजगार और शिक्षा पाने के लिए ये जातियाँ शहरो में जाकर बसने लगी। जिसके कारण गाँव में पायी जाने वाली जाति व्यवस्था में एक रिक्त स्थान पैदा हो गया है। और इसी रिक्त स्थान को भरने के लिए वर्णव्यवस्था की नीचे की जतियों खास तौर पर अन्य पिछड़े वर्ग ने संस्कृतिकरण को अपनाकर उसे भरने का प्रयास किया मानव विज्ञान के संदर्भ में भारतीय ग्रामों की संरचना में होने वाला यह परिवर्तन अत्यंत महत्वपूर्ण है। अतः प्रवसन का अध्ययन महत्वपूर्ण हो जाता है।

उत्तर प्रदेश में प्रवसन एवं उसके प्रभाव व्यापक स्तर पर दृष्टिगत होते है । संस्कृतिकरण एवं पश्चिमीकरण के आकर्षण के प्रभाव के कारण प्रवसन में बृद्धि देखी गई है क्योकि जब ग्रामीण क्षेत्र के लोग प्रवसन के फल स्वरूप विभिन्न प्रकार के सामाजिक परिवर्तन से परिचित होते है तो उनके संपर्क में रहने वाले अन्य लोग भी संस्कृतिकरण एवं पश्चिमीकरण का अनुसरण करते हैं जिसके

परिणामस्वरूप प्रवसन व्यापक स्तर पर दृष्टिगोचर होते हैं। उत्तर प्रदेश में मिर्जापुर,सोनभद्र, गाजीपुर, चंदौली, वाराणसी, भदोही, मऊ इत्यादि जिलों में प्रवसन एवं उसके प्रभाव व्यापक स्तर पर दृष्टिगत हुए हैं। प्रवसन के परिणाम स्वरूप लोगों में सामाजिक, आर्थिक,सास्कृतिक परिवर्तन दृष्टिगोचर हुए हैं। इस प्रकार प्रवसन का अध्ययन विश्लेषण व सामाजिक, आर्थिक, सास्कृतिक पक्ष की व्याख्या करने में महत्वपूर्ण स्थान रखता है आज हम एक ऐसी दुनिया में जी रहें हैं जिसमें पारस्परिक निर्भरता बढती जाती रही है। यह पारस्परिकता विभिन्न लोगों में, क्षेत्रों में और देशों में देखने को मिलती है। यह सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक क्षेत्रों में भी पाई जाती है। इस पारस्परिकता को तकनीकी भाषा में सार्वभौमीकरण कहतें हैं। इसे भूमण्डलीकरण भी कहतें हैं। यह इसलिए कि इसकी सामाजिक,आर्थिक,राजनीतिक, प्रक्रियासारे संसार को अपनी गिरफ्त में ले लेती हैं। आज समाज विज्ञानों में और विशेषकर समाजऔर मानवविज्ञान में कोई भी विमर्श अधूरा है, जब तक सार्वभौमीकरण का उल्लेख नहीं किया जाता। कोई भी कृति हो, सब अधूरा है, अप्रासंगिक है जब तक सार्वभौमिकीकरण का संदर्भ नही दिया जाता।

अध्ययन की प्रासंगिकता उसके तात्कालिक महत्व के आधार पर ही मान्य होती है। आधुनिकता, उत्तर आधुनिकता के साथ जब ‘‘लेट कैपिटलिज्म” के रूप में सम्पूर्ण समाज संम्पर्क में हो तब उसके प्रभावों और उसके कारको की खोज और भी महत्वपूर्ण बन जाती है।

एक ओर जब देशज ज्ञान और स्वायत्ता पर बहसें छिडी हों और नवीन आर्थिक नीतियों द्वारा समाज में नयी वर्ग विविधता का स्वरूप सामने हो तब ग्रामीण समाज पर इसके प्रभावों का अध्ययन और महत्वपूर्ण हो जाता है।

राष्ट्रएकीकरण एवं राष्ट्र-राज्य की अवधारणाओं के साथ सामाजिक समर्पण का बाजारीय दबाव जिसके मुख्य कारकों में प्रवसन और संस्कृति श्रेष्ठता का भाव हो उस समाज में नवीन परिवर्तनों की खोज अध्ययन के महत्व को बढा देती है।